अच्छे दिनों की शुरुआत बैंकों के निजीकरण की तैयारी

रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया की एक कमिटी ने अपनी एक ताजा रिपोर्ट में कहा है कि सरकार को सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में अपनी हिस्सेदारी 50 प्रतिशत से भी कम कर देनी चाहिए। कर्ज देनेवाली संस्थाएं जिस तरह से शासित की जा रही हैं, उसकी आलोचना करते हुए कमिटी ने यह निष्कर्ष दिया है। कमिटी के अध्यक्ष एक्सेस बैंक के पूर्व चेयरमेन पी जे नायक का कहना है कि सार्वजनिक क्षेत्र के 26 बैंकों को कई तरह के दबाव झेलने पड़ते हैं, जैसे- रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया और वित्तमंत्रालय का दोहरा दबाव। इसके साथ ही उन्हें केन्द्रीय सतर्कता आयोग और कैग की बाह्य सतर्कता को भी झेलना पड़ता है।

कमिटी का कहना है कि सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में दिशा निर्देशन, रणनीतिक मुद्दों तथा जोखिम प्रबंधन पर ध्यान देने का अभाव है। इसे तभी सुधारा जा सकता है जब सरकार खुद को शासकीय गतिविधियों से दूर कर ले और बैंकों में अपनी बहुलांश हिस्सेदारी को त्याग दे। इसके लिए कमिटी ने पूरा खाका तैयार किया है, जिसमें सर्वप्रथम सरकार को अपनी हिस्सेदारी बैंक विनिवेश कम्पनी (बीआईसी) को हस्तांतरित करनी होगी तथा इसके जरिये अपनी प्रशासकीय जवाबदेही को बीआईसी को सौंपना होगा। और बैंकों को कम्पनी की तरह संचालित किया जायेगा।

याद करें, 2008 में पूरी दुनिया वित्तीय महा संकट की चपेट में थी। अमरीकी बैंकिंग और वित्तीय व्यवस्था ताश के पत्तों की तरह ढह गयी थी। बैंकों और वित्तीय संस्थाओं का दिवालिया होना रोजमर्रे की बात था। सरकारी सहायता (बेलआउट) का कृत्रिम ऑक्सीजन भी वित्तीय व्यवस्था की सांसों को चलाते रहने में अपनी असमर्थता जाहिर कर रहा था। लेकिन ठीक इसी वक्त यूपीए सरकार के दूसरे कार्यकाल में वित्तमंत्री रहे प्रणव मुखर्जी ने 2009-10 के अपने बजट भाषण में घोषणा की थी, कि इस तबाही से ''भारतीय बैंकिंग और वित्तीय क्षेत्र सापेक्षिक रूप से अछूते रहे'' तथा इंदिरा गांधी के शासन काल में किया गया बैंकों का राष्ट्रीयकरण भारतीय अर्थव्यवस्था को उस विकट संकट से उबार ले गया। हालांकि भारतीय अर्थव्यवस्था संकट से अछूती नहीं रही, जैसा कि प्रणव मुखर्जी का दावा था। उसी दौरान आईसीआईसीआई बैंक को भारत में 3 करोड़ डॉलर का नुकसान हुआ। अमरीकी वित्तीय संस्थान लेहमन ब्रदर्स में निवेश के कारण स्टेट बैंक ऑफ़ इण्डिया और पंजाब नेशनल बैंक का 50-50 लाख डॉलर डूब गया। लेहमन ब्रदर्स की भारतीय शाखा में काम कर रहे 2500 कर्मचारियों को अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ा। फ़िर भी अमरीकी तबाही की तुलना में यह नुकसान कुछ नहीं था, और यह कहना गलत नहीं कि बैंकिंग और वित्तीय व्यवस्था इस संकट से बहुत कम प्रभावित हुई थी।

1990 में नयी आर्थिक नीतियों के तहत उदारीकरण-निजीकरण की प्रबल समर्थक कांग्रेस सरकार अचानक बैंकिंग और वित्तीय के राष्ट्रीयकरण की अच्छाइयों और इंदिरा गांधी की इस दूरदर्शिता का गुणगान करने लगी । लेकिन जीवन रक्षण प्रणाली पर टिकी अर्थव्यवस्था में जैसे ही जीवन के लक्षण नजर आये एक बार फ़िर पूंजीपतियों के गिरोह और उनकी हितैषी सरकारों ने बैंकिंग और वित्तीय क्षेत्र को नियंत्रण मुक्त करने की तैयारी शुरू कर दी है। वैश्विक वित्तीय संकट के समय राष्ट्रीयकरण की जिन नीतियों को उद्धारक के रूप में सराहा गया था, अब उसे विकास के मार्ग में बाधक समझा जाने लगा। पीजे नायक कमिटी की सिफारिशें इसी का एक ताजा उदाहरण है।

मोदी सरकार में वित्तमंत्रालय सम्भाल रहे अरुण जेटली ने अपने तत्कालिक एजेण्डे में वित्तीय क्षेत्र में 49 प्रतिशत निजी पूंजी निवेश को प्राथमिकता में रखा है। दरअसल नयी सरकार का पिछली सरकार की नीतिगत योजनाओं से कोई मतभेद नहीं है। बैंकों के निजीकरण की वकालत 2007 में पेरसी मिस्त्री कमेटी की रिपोर्ट में भी की गयी थी, लेकिन 2008 के संकट के चलते उसे कुछ समय के लिये टाल दिया गया था। अब एक बार फ़िर विनिवेश का जिन्न बोतल से बाहर आने के लिए कुलबुला रहा है।

आज का दौर वित्तीय पूंजी का दौर है। वित्तीय क्षेत्र पर अधिकार होने का अर्थ है, अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों की प्राथमिकता और पहलकदमी को अपनी मुठ्ठी में कर

लेना। जिस दौर में भारतीय शासकों ने स्वावलम्बी और आत्मनिर्भर विकास का सपना देखना बंद नहीं किया था, तब बैंकों का राष्ट्रीयकरण करके उनकी दिशा कृषि, उद्योग और पंचवर्षीय योजनाओं को आगे बढाने में मोड़ी थी। कृषि और लघु उद्योग को सस्ते दाम पर कर्ज देना, सहकारिता और कुटिर उद्योग को बढ़ावा देना, तथा सरकारी योजनाओं में सहयोगी भूमिका निभाना बैंकों की प्राथमिकता होती थी। लेकिन आज बाजार अर्थव्यवस्था और निजी मुनाफ़े को अंगीकार करने के बाद उनके सुर बदल गये हैं। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की नीलामी और बैंकों से सरकारी नियंत्रण हटाने के पीछे जनविरोधी नवउदारवादी नीतियां हैं, जिनका मूलतंत्र है-सब कुछ मुनाफ़े के लिए सब कुछ पूंजीपतियों के लिए।

> 1990 में नयी आर्थिक नीतियों के तहत उदारीकरण-निजीकरण की प्रबल समर्थक कांग्रेस सरकार अचानक बैंकिंग और वित्तीय के राष्ट्रीयकरण की अच्छाइयों और इंदिरा गांधी की इस दूरदर्शिता का गुणगान करने लगी । लेकिन जीवन रक्षण प्रणाली पर टिकी अर्थव्यवस्था में जैसे ही जीवन के लक्षण नजर आये एक बार फ़िर पूंजीपतियों के गिरोह और उनकी हितैषी सरकारों ने बैंकिंग और वित्तीय क्षेत्र को नियंत्रण मुक्त करने की तैयारी शुरू कर दी है। वैश्विक वित्तीय संकट के समय राष्ट्रीयकरण की जिन नीतियों को उद्धारक के रूप में सराहा गया था, अब उसे विकास के मार्ग में बाधक समझा जाने लगा। पीजे नायक कमिटी की सिफारिशें इसी का एक ताजा उदाहरण है।

सार्वजनिक सम्पत्ति को कौड़ियों के मोल देशी-विदेशी पूंजीपतियों के हवाले करने में भाजपा सरकार कांग्रेस से किसी मामले में पीछे नहीं रहेगी। बैंकिंग क्षेत्र के ट्रेड यूनियनों ने 23 मई को निजीकरण के ख़िलाफ़ हड़ताल भी की थी। लेकिन ट्रेड यूनियनों के स्तर पर यह एक हारी हुई लड़ाई है। आनुष्ठानिक और प्रतीकात्मक विरोधों से इन नीतिगत बदलावों को रोक पाना सम्भव नहीं है। **देश-विदेश**

मीडिया और समाज की चेतना

आजकल हमलोग प्रचार में लगे हुए हैं। हम लोगों के अन्दर एक भीरू मानसिकता को देख रहे हैं। लोग़ों के पास टाईम नहीं है। लोग परचा पढ़ना तक मुनासिब नहीं समझते, भगत सिंह के नाम पर भी ज्यादा लोग उत्साहित नहीं होते। मीडिया पर हद से ज्यादा विश्वास आदि ऐसे व्यावहार हैं जो समाज में कुंठित चेतना को परिभाषित करते हैं। आज का युवा ज्यादातर मौज-मस्ती व अय्याशी की तरह भाग रहा है। ये सब क्यों हो रहा है? इसके पीछे कारण क्या हैं। यह हमें जानना होगा। 1991 की आर्थिक नीतियों के लागू होते ही समाज में नैतिक पतन का ग्राफ़ तेजी से बढ़ने लगा। पूंजीपतियों की मुनाफ़े की हवस के कारण नेट तथा बाजार में न्यूड फ़िल्म तथा तस्वीरें परोसी जा रही हैं। मीडिया भी अपने मालिकों के मुनाफ़े को बढ़ाने में लगा हुआ है। वह समाज की असली तस्वीर जनता के सामने नहीं रखता। मीडिया ही समाज के हीरो और विलेन चुनती है। वह असली संघर्ष को नकली और नकली संघर्ष को असली बनाने पर उतारू है। और एक हद तक कामयाब भी हुई है आज भारत तथा पूरी दुनिया का समाज ऐ उपभोक्तावादी संस्कृति में डूबा हुआ है। इसमें मीडिया का रोल अहम है। आज भारत में कूपमंडूक शिक्षा का बोलबाला है। प्रगतिशील शिक्षा के अभाव में जनता भीरू तथा खुदगर्ज हो गयी है। समाज की चेतना उत्पादन के तरीकों तथा उत्पादन संबंध पर निर्भर करती है। समाज की चेतना को उन्नत स्तर पर पहुंचाने के लिये मज़दूरों को संगठित होकर, आम हड़तालों के द्वारा शमशान की शांति को तोड़ना होगा। आज जनता भ्रष्टाचार तथा नैतिक पतन के ख़िलाफ़ लड़ रही है। उसके संघर्ष को उन्नत चेतना पर पहुंचाने के लिये मज़दूरों को लामबंद करते हुए समाजवाद के संघर्ष को आगे बढ़ाना होगा। और हमें इस मीडिया को समाज के सामने नंगा करना पड़ेगा। प्रगतिशील प्रचार के लिये अपने विकल्प चुनने होंगे।

-नागरिक

गतांक की चीर-फ़ाड़

मज़दूर मोर्चा के 16-30 सितम्बर 2014 के अंक में राष्ट्रीय, क्षेत्रीय व स्थानीय मुद्दों पर अनेक महत्वपूर्ण लेख पढने को मिले। लेख 'अज़ादी का दावेदार तोता छोटे से बड़े पिंजरे की ओर-करप्शन ब्यूरो ऑफ़ इंडिया का बिकाऊ रणजीत' द्वारा सी बी आई के डायरेक्टर रणजीत सिन्हा के भ्रष्टाचार में लिप्त होने का पर्दाफ़ाश किया गया है। ऐसे अधिकारी केंद्र में शासक दल के चहेते होते हैं तथा उनको सत्ता का आश्रय प्राप्त होता है जो रणजीत प्रकरण से स्पष्ट है।

यक्ष प्रश्न यह है कि रणजीत सिन्हा अपने निवास पर आरोपित व्यक्तियों अथवा उनके दलालों से अकेले में क्यों मिलते थे? आरोप है कि आरोपित गोश्त निर्यातक मोईन कुरैशी पिछले 15 माह में 90 बार रणजीत सिन्हा से मिला था। इनमें आपस में कोई रिश्तेदारी तो थी नहीं, स्पष्ट है कि कुरैशी रणजीत सिन्हा से कोई नजायज फ़ायद लेने की जुगाड़ में रहा होगा। सिन्हा के वकील के रवैये से झल्लाकर सवोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायधीश ने उन्हें कड़ी चेतावनी देते हुए सी बी आई से कहा कि कोयला खदान आवंटन केस से संबंधित किसी भी मामले में अंतिम निर्णय नहीं लिया जाए। वकील प्रशांत भूषण द्वारा अदालत में पेश की गई डायरी रणजीत सिन्हा के शपथ पत्र के संदर्भ में संदिग्ध हो गई है जिसकी अभी प्रामाणिकता सिद्ध होना बाकी है।

लेख 'भाजपाई धनपशु विपुल ने मज़दूर मोर्चा रोकने का प्रयास किया' बड़ा चौंकाने वाला है। विचार प्रकट करने की स्वतंत्रता के अधिकार की वकालत करने वाली मोदी सरकार। कांग्रेस सरकार के कार्यकाल में अखबार के बंडल उठवा लेना ओछी व शर्मनाक घटना है। इसी प्रकार की शिकायत दिल्ली के कुछ इलाकों के पाठकों ने की है जिनको हिन्दुस्तान टाईम्स अखबार कई दिनों से नहीं मिल रहा था। जांच करने पर पता चला कि कुछ लोग़ों का गिरोह इस अखबार के बंडल को मार्केट से ही उठा लेता था। एक दिन तो लगभग 20000 अखबारों का बंडल दिल्ली से मुम्बई जाने वाली राजधानी एक्सप्रेस गाड़ी से उतारा गया।

लेख 'लव-जिहाद का बहता मवाद' द्वारा भाजपा व संघ परिवार द्वारा अपनाई जा रही साम्प्रदायिक विभाजनकारी नीति का खुलासा किया गया है। नरेन्द्र मोदी व मोदी सरकार की कथनी और करनी में बड़ा भारी अंतर है। मोदी सबको साथ लेकर चलने की बात करते हैं तो उन्हीं की छत्र छाया में भाजपा व संघ परिवार के लोग खुलेआम गुजरात की तरह उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश तथा अन्य प्रदेश जहां चुनाव होने वाले हैं वहां साम्प्रदायिक उन्माद भड़काने पर आमादा हैं।

''टिकट बंटते ही खुली पोल 'अनुशासित' पार्टी की'' लेख में चाल, चरित्र व अनुशासित पार्टी का दम्भ भरने वाली भाजपा का पर्दाफ़ाश किया गया है। चुनाव के समय दल बदलुओं, दागी व पार्टी को अतुल धन राशि देने वालों को गले लगाकर विचारधारा को महत्वहीन बना दिया गया है। इसी कारण जगह-जगह पर भाजपा में बागी सुर मुखर हो गये हैं।

समाज में नारी की समानता की स्थापना के लिए हमारी आदतों में बराबरी लाने की आवश्यकता पर लेख 'हमारी आदत में बराबर की स्त्री' में सटीक विश्लेषण किया गया है। लेख ''सौ दिन मोदी सरकार के, जनता के लिए 'बाबाजी का ठुल्लू' से स्पष्ट है कि वास्तव में अच्छे दिन तो कॉरपोरेट घराने, अमेरिका, जापान, इज़रायल, संघ परिवार, साम्प्रदायिक ताकतों आदि के आए हैं और आम जनता, किसान, मज़दूर तो पहले से भी ज्यादा पीस रहे हैं बल्कि अब तो उनकी सुनवाई करने व आवाज़ उठाने वाला भी कोई नहीं है। मंहगाई, शिक्षा, स्वास्थ्य, भ्रष्टाचार, काला धन वापसी आदि मुद्दे जिनके बलबूते पर मोदी सरकार सत्ता में आई थी उनको दरकिनार कर दिया गया है। मीडिया तो मोदीमय बना हुआ है और नमो-नमो का जाप कर रहा है।

आम आदमी के वरिष्ठ नेता व प्रोफेसर कवि कुमार विश्वास तथा चारण-भाट में कोई अंतर नहीं है जिसका स्तम्भ 'तुकी-ब-तुकी' में वर्णन किया गया है। 'गुमशुदा चिट्ठी' में भगत सिंह की गुमशुदा चिट्ठियों को सामने लाने से भगत सिंह के विचारों को समझने में और सुविधा मिलेगी। अन्य प्रकाशित लेख भी उच्च स्तरीय व प्रेरणादायक हैं।

प्रो. जुगल किशोर गुप्ता

तुर्की-ब-तुर्की

''तीन हज़ार युवाओं को नौकरी देना अपराध है तो ऐसा अपराध मैं सौ बार करूंगा।''

हमारा कहना है:-

□ .चौटाला जी किसी को नौकरी देना तो अपराध नहीं हैऔर न ही किसी को नौकरी देने के अपराध में आपको जेल भेजा गया है। आपको जेल भेजा गया उन तीन हज़ार से अधिक मास्टरों की नौकरी छीनने के अपराध में जिनको नौकरी के लिये बाकायदा चुन लिया गया था।

□ जिन लोग़ों ने सोचने समझने का काम बन्द करके केवल आप पर भरोसा करना सीख रखा है उन्हें तो आप जरूर बहका सकते हैं, वरना सबको पता है कि शिक्षा विभाग ने मास्टरों का चयन करके लिस्ट तैयार कर ली थी। आपके कहने पर जब एक उच्च शिक्षा अधिकारी ने लिस्ट बदलने से इन्कार कर दिया तो आपने दूसरा और फ़िर तीसरा अधिकारी बदला।

□ उस तीसरे अधिकारी संजीव कुमार ने आप लोग़ों के आदेश पर किस तरह से सीलबंद अल्मारी को काट कर लिस्ट बदली और कैसे नई लिस्टें बनी, इसका सारा विवरण अदालत के सामने तमाम गवाहियों व दस्तावेज़ों समेत प्रस्तुत किया गया था।

□ सर्वविदित है आपके ऊपर 2003-4 में यह मुकदमा उस वक्त दायर हुआ था जब राज्य में आप खुद मुख्यमंत्री थे और केन्द्र में आपकी सहयोगी भाजपा के अटल बिहारी वाजपेयी प्रधानमंत्री थे।

यह मुकदमा कांग्रेस पार्टी ने नहीं बल्कि उस संजीव कुमार आई.ए.एस. अधिकारी ने स्वयं सुप्रीम कोर्ट में खड़े होकर दर्ज कराया था जिसके द्वारा आपने यह सारा घोटाला कराया था। मुकदमे की तफ़्तीश का पूरा काम हरियाणा पुलिस ने नहीं बल्कि सी बी आई ने किया था और अदालती कार्यवाही भी दिल्ली में ही की गयी थी। इसलिये इस बात में कतई कोई दम नहीं है कि यह सब भूपेन्द्र हुड्डा का षड़यन्त्र है।

□